

---

## गीता में उत्तम प्रबंधन के सूत्र

डॉ. सुबोध अग्रवाल, आई.ए.एस., अतिरिक्त मुख्य सचिव, उच्च एवं तकनीकी शिक्षा, जयपुर, राजस्थान

**गी**ता मानव जीवन को उत्तम प्रकार से जीने तथा स्वयं और समाज की उन्नति के लिये आत्म-प्रबंधन, आत्मानुशासन की सीख देते हुये सांगठनिक प्रबंधन एवं उत्तम प्रशासन के उत्कृष्ट सूत्र भी प्रस्तुत करती है। अगर हम आज की दृष्टि से प्रबंधन के स्वरूप पर विचार करें तो प्रबंधन एक प्रक्रिया है जो नियोजन, संगठन, निर्देशन, अभिप्रेरण एवं नियंत्रण आदि कार्यों के माध्यम से उपलब्ध भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग करते हुये इस प्रकार समन्वय स्थापित करती है कि संस्था के लक्ष्यों एवं वातावरण की अपेक्षाओं को दक्षता पूर्ण तथा प्रभावकारी ढंग से पूरा किया जा सके।<sup>१</sup> आदि काल से लेकर आज तक प्रबंधन मानव की प्रवृत्ति रही है, क्योंकि उत्तम प्रबंधन के बिना भौतिक एवं आध्यात्मिक (Spirituality) दोनों ही उद्देश्यों की प्राप्ति संभव नहीं है। यदि प्रबंधन के महत्त्व की दृष्टि से विचार करें तो गीता से हमें निम्नांकित महत्त्वपूर्ण सूत्र उपलब्ध होते हैं-

१. लक्ष्य निर्धारण एवं परियोजना निर्माण  
(अ) सांगठनिक लक्ष्यों की पूर्ति में व्यक्तिगत स्वार्थ निहित न हो
२. सांगठनिक अनुशासन एवं व्यक्तिगत सर्जनात्मक (Creative) स्वतंत्रता के बीच संतुलन
३. स्वभावानुकूल निपुणता से श्रम विभाजन
४. पहले ज्ञान फिर कार्य
५. योग से कार्यकुशलता
६. प्रबंधन द्वारा सबका कल्याण
७. समत्व भाव

इन बिन्दुओं पर एक-एक करके गीता की दृष्टि से विचार किया जाना अपेक्षित है।

---

१. Lawrence Appley : Formula for Success : A Core Concept of Management : Kith & Gubelini : Business Management.

---

(१) लक्ष्य निर्धारण एवं परियोजना निर्माण-

**(Goal setting & Project construction)**

प्रबंधन में लक्ष्य निर्धारण और परियोजना निर्माण के संबंध में अनेक सिद्धांतों का पालन किया जाता है। इनमें से सबसे अधिक प्रचलित सिद्धांत Smart उद्देश्यों का है। Smart (चातुर्यपूर्ण) उद्देश्यों से तात्पर्य यह है कि जब भी उद्देश्य निर्धारित किया जाये तो यह सुनिश्चित किया जाये कि उद्देश्य विशिष्ट (Specific), मात्रात्मक (Measurable), प्राप्य (Achievable), तर्कसंगत (Rational) एवं समयबद्ध (Timebound) हो।

उद्देश्य निर्धारण और परियोजना निर्माण के दौरान निर्णय लेना सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। पीटर एफ. ड्रकर<sup>२</sup> ने अपनी किताब प्रबंधन के सिद्धांत में निर्णयन को एक प्रक्रिया के तौर पर परिभाषित किया है जिसमें समस्या के समाधान के लिए विकल्पों की पहचान की जाती है, उन सभी विकल्पों का विस्तृत विश्लेषण किया जाता है, विश्लेषण के आधार पर सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन किया जाता है। गीता का अवलोकन करने पर इस संबंध में कुछ महत्वपूर्ण सुझाव उपलब्ध होते हैं जिनका समावेश आज के प्रबंधन की गुणवत्ता में वृद्धि करेगा-

**चिरस्थायी परिणाम श्रेष्ठता और सर्वत्र प्रशंसा**

गीता ने किसी भी लक्ष्य की योजना बनाते समय तीन बातों पर ध्यान देने का परामर्श दिया है, (१) योजना चिरस्थायी परिणाम दे, (२) श्रेष्ठता को केन्द्र में रखे तथा (३) सारा क्रिया-कलाप ऐसा हो जिसकी सर्वत्र प्रशंसा हो।

**सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते।**

**प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥<sup>३</sup>**

हे पार्थ! परमात्मा के सत्- इस नाम का सत्ता मात्र में और श्रेष्ठ भाव में प्रयोग किया जाता है तथा प्रशंसनीय कर्म के साथ सत् शब्द जोड़ा जाता है।

अभिप्राय यह है कि हमारे लक्ष्य तथा हमारी परियोजनायें दूरदृष्टि रखते हुए इस प्रकार निर्धारित की जायें कि वे चिरस्थायी परिणाम दे सकें। गीता हमें प्रबंधन को चिरस्थायी परिणाम तथा श्रेष्ठ गुणवत्ता वाला एवं सर्वत्र प्रशंसा प्रदान करवाने वाला बनाने का परामर्श देती है। गीता के केन्द्र में आध्यात्मिक

---

२. पीटर एफ. ड्रकर "नवाचार एवं उद्यमिता" पृष्ठ-१३०-१३३

३. गीता १७.२६

---

दृष्टि रहने के कारण ये विशेषतायें हमारे सामने आयी हैं जिनका उल्लेख आधुनिक प्रबंधन में नहीं मिलता।

**(अ) सांगठनिक लक्ष्यों की पूर्ति में व्यक्तिगत स्वार्थ (Ulterior Motive) निहित न हो**

प्रबंधन प्रक्रिया में संगठन द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति प्रमुख होती है उन वृहद् उद्देश्यों की पूर्ति के बीच प्रबंधक एवं कर्मचारियों के निहित स्वार्थपूर्ति (Ulterior Motive) का लालच नहीं होना चाहिये, यदि ऐसा होगा तो प्रबंधन के पूर्वनिर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति दूषित हो जायेगी। गीता हमारा इसमें मार्गदर्शन करती है।

**व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।**

**बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्॥<sup>४</sup>**

(हे कुरुनन्दन! इस समबुद्धि की प्राप्ति के विषय में व्यवसायात्मिका बुद्धि एक ही होती है। अव्यवसायी मनुष्यों की बुद्धियाँ अनन्त और बहुशाखाओं वाली होती हैं।)

इस श्लोक पर लोकमान्य तिलक की टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है- “बुद्धि शब्द के पीछे व्यवसायात्मिका विशेषण है। व्यवसाय अर्थात् कार्य-अकार्य का निश्चय करने वाली बुद्धि। व्यवसायात्मिका बुद्धि के स्थिर या एकाग्र न रहने से प्रतिदिन भिन्न-भिन्न वासनाओं से मन व्यग्र हो जाता है और मनुष्य अनेक झंझटों में पड़ जाता है।”<sup>५</sup>

अतः लक्ष्यों के प्रति दृढ़ता एवं प्रतिबद्धता विभिन्न परिस्थितियों एवं उतार-चढ़ाव के बीच भी प्रबंधक को उत्तम परिणामों तक पहुंचाने में प्रमुख भूमिका निभाती है। इसलिये संगठन के लक्ष्यों की पूर्ति में प्रबंधक या कर्मचारियों के व्यक्तिगत स्वार्थ निहित न होने पर प्रबंधन के निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति होती है साथ ही संगठन को उत्तम साख प्राप्त होती है। गीता के अवलोकन से उत्पन्न दृष्टि का ही यह प्रभाव होता है कि प्रबंधक एवं कर्मचारी बिना किसी निहित व्यक्तिगत स्वार्थ के प्रबंधन के लक्ष्यों की पूर्ति में उत्तम कर्म करते हैं अतः आज के प्रबंधन में इस अंश का भी समावेश आवश्यक प्रतीत होता है।

---

४. गीता २/४१

५. गीता रहस्य, भाग-२, पृष्ठ-५०

---

(२) सांगठनिक अनुशासन व व्यक्तिगत सृजनात्मक स्वतंत्रता के बीच संतुलन

**(Balance of Individual Creative freedom & Organizational Discipline)**

प्रबंधन में सांगठनिक अनुशासन आवश्यक है किन्तु उत्तम प्रबंधक को यह ध्यान रखना चाहिये कि इसमें जिन कर्मचारियों को कार्य सौंपा गया है उनकी सर्जनात्मक स्वतंत्रता बाधित न हो, उनको अपना कार्य नवीनता और गुणवत्ता के साथ पूर्ण करने की सर्जनात्मक स्वतंत्रता होनी चाहिये। अतः अनुशासन और सर्जनात्मक स्वतंत्रता में संतुलन रहना चाहिये।

उत्तम प्रबंधन में उद्देश्यों के प्रति दृढ़ व प्रतिबद्ध रहते हुये उन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विभिन्न विकल्पों पर विचार करते हुए उत्तम विकल्पों का चुनाव किया जाना चाहिये। इससे कार्य न केवल शीघ्रता से पूर्ण होता है अपितु उसमें उत्तम गुणवत्ता भी होती है। गीता इसके लिये हमारा मार्ग प्रशस्त करती है -

**प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।**

**बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी।।<sup>६</sup>**

अर्थात् हे अर्जुन! वह बुद्धि सात्त्विक है जिसके द्वारा मनुष्य यह जानता है कि क्या करणीय है और क्या नहीं, किससे डरना चाहिये और किससे नहीं, क्या बंधन है और क्या स्वतंत्रता देने वाला है।

इस प्रकार क्या-क्या करने के विकल्प हैं और किन-किन को छोड़ना है, कौन से विकल्पों से दूर रहना है, इस प्रकार कौन-सी बातें बंधन स्वरूप होंगी। सात्त्विक बुद्धि से इन सभी विकल्पों पर विचार करते हुये कार्य में आगे बढ़ना चाहिये, सात्त्विक निर्णय प्रारम्भ में दुष्कर प्रतीत होते हैं किन्तु उनके दूरगामी परिणाम मधुर होते हैं। इसके विपरीत राजसी दृष्टि प्रारंभ में आकर्षक लगती है किन्तु उसका फल कटु होता है। अतः सर्वोत्तम विकल्पों पर विचार कर उनका निर्धारण होना चाहिये। यह उत्तम विकल्पों के चयन की स्वतंत्रता तभी संभव है जब अनुशासन व व्यक्तिगत सर्जनात्मक स्वतंत्रता में संतुलन हो, अनुशासन कठोर होने पर सर्जनात्मकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सांगठनिक अनुशासन व व्यक्तिगत सर्जनात्मक स्वतंत्रता के बीच उत्तम संतुलन से प्रबंधन की गुणवत्ता में वृद्धि होगी और कार्य प्रक्रिया में आनन्द रहेगा। गीता द्वारा प्रदत्त आध्यात्मिकता के कारण व्यक्ति को आत्मिक स्वतंत्रता होती है जिससे उसकी सर्जनात्मकता उत्कृष्ट होती है। यह बिन्दु भी आज के प्रबंधन में विचारणीय है।

---

६. गीता १८/३०

---

### (३) स्वभावानुकूल निपुणता से श्रम-विभाजन

हेनरी फेयोल द्वारा दिए गए सामान्य प्रबंधन के चौदह सिद्धांत<sup>७</sup> पाश्चात्य प्रबंधन साहित्य के प्राथमिक लेखों में से एक है जो कि १९वीं शताब्दी की शुरुआत में प्रतिपादित किये गये। फेयोल का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है- श्रम का विभाजन। फेयोल प्रबंधन की सफलता के लिए कार्य के बंटवारे को जरूरी बताते हैं और लिखते हैं कि व्यक्ति की क्षमताओं और रुचियों के आधार पर किसी भी टीम में कार्य का विभाजन किया जाना चाहिए ताकि उद्देश्यों की प्राप्ति दक्षता और प्रभावी तरीके से की जा सके। गीता ने सत्त्व, रज और तमोगुण के अनुसार व्यक्तियों के वर्गीकरण का मनोवैज्ञानिक आधार दिया है। सत्त्वगुण निर्मल होने के कारण प्रकाशमय है और विकार रहित, ज्ञान और सुख वाला होता है। रजोगुण, रागरूप कामना और आसक्ति से उत्पन्न होता है यह जीवात्मा को कर्मों और फलों के सम्बन्ध से बांधता है। सब देहाभिमानीयों को मोहित करने वाला तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न होता है जो कि जीवात्मा को प्रमाद, आलस्य और निद्रा के साथ बांधता है।<sup>८</sup>

उक्त तीनों गुण एक साथ मिलकर कार्य करते हैं, प्रत्येक मनुष्य में इनकी स्थिति होती है परन्तु जिस गुण की प्रधानता होती है, उसी से उस मनुष्य का स्वभाव बनता है। स्वभाव के अनुकूल ही वे बौद्धिक चिन्तन-मनन, रक्षात्मक, वाणिज्यिक एवं सेवा सुश्रूषा संबंधी कार्यों को करने में समर्थ होते हैं।<sup>९</sup>

आज का प्रबंधन व्यक्ति की क्षमताओं व रुचि के आधार पर श्रम विभाजन की बात कहता है पर गीता इससे भी आगे व्यक्ति के गुणों के आधार पर व्यक्ति के स्वभाव एवं उसके आधार पर उत्पन्न निपुणता से कार्य निर्धारण व श्रम विभाजन की बात करती है जो कि हमें एक अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है। अतः प्रबंधन में व्यक्ति के गुणानुसार स्वभाव को पहचान कर, उसकी निपुणता की जाँच कर उनको बौद्धिक चिन्तन, शारीरिक परिश्रम, रक्षात्मक, वाणिज्यिक एवं सेवा सुश्रूषा संबंधी कार्यों में श्रम विभाजन कर उनका कार्य निर्धारण करना चाहिये।

“स्वभावनियतं कर्म कुर्वन् नाप्नोति किल्बिषम्।”<sup>१०</sup>

अर्थात् स्वभाव के द्वारा निर्धारित कर्म को करते हुये व्यक्ति पाप का भागी नहीं होता।

---

७. हेनरी फेयोल, प्रबंधन के १४ सिद्धान्त 'जर्नल ऑफ मैनेजमेंट हिस्ट्री', वाल्यूम १६, इश्यू-४, पृष्ठ ४८६-५०३

८. गीता १४/६,७,८

९. गीता १८/४२, ४३, ४४

१०. गीता १८/४७

---

“प्रत्येक मनुष्य में ईश्वर निर्मित प्रकृति, स्वभाव और गुणों के अनुरूप जो भिन्न-भिन्न प्रकार की योग्यतायें होती हैं उसे ही अधिकार कहते हैं और वेदांत सूत्र में कहा है कि - इस अधिकार के अनुसार प्राप्त कर्मों को पुरुष ब्रह्मज्ञानी हो जाने पर भी लोक संग्रहार्थ जीवन पर्यंत करता जावे, छोड़ न दे।”<sup>११</sup>

कहने का तात्पर्य यह है कि अपने गुणों के अनुसार स्वभाव से युक्त कार्य करते हुये व्यक्ति में उस कार्य के प्रति निपुणता उत्पन्न हो जाती है। अतः उससे त्रुटियों की संभावना कम हो जाती है फलतः वह कार्य शीघ्र भी सम्पन्न होता है और गुणात्मकता भी लिये हुये होता है। अतः गीता हमें सत्व, रज और तमो गुण से व्यक्ति के स्वभाव के मनोवैज्ञानिक आधार पर निपुणता से श्रम विभाजन का मार्गदर्शन करती है।

#### (४) पहले ज्ञान फिर कार्य-

१८वीं एवं १९वीं शताब्दी को औद्योगिक युग कहा गया। २०वीं शताब्दी को तकनीकी युग माना जाने लगा। मगर आज की २१वीं शताब्दी को हम ज्ञान युग कहते हैं। आज के व्यावसायिक या राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में जिसके पास सबसे अधिक जानकारी है वही सबसे अधिक कामयाब और शक्तिशाली है। दुनिया की सबसे सफल और बड़ी कम्पनियां जैसे गूगल, फेसबुक, माइक्रोसॉफ्ट, इनफोसिस आदि सभी जानकारी या ज्ञान से ही व्यवसाय कर रही हैं। इनका सबसे महत्वपूर्ण संसाधन भूमि, भवन या मशीनें न होकर जानकारी है। सफल प्रबंध के लिए निर्णयन क्षमता सबसे जरूरी है। अच्छे निर्णय लेने के लिए गहन विश्लेषण की आवश्यकता होती है एवं विश्लेषण करने के लिए सही एवं पूरी जानकारी होना बेहद जरूरी है। प्रबंधन के लिए सबसे महत्वपूर्ण संसाधन जानकारी और ज्ञान है वो चाहे सरकारी संस्थान हो अथवा निजी।

उत्तम प्रबंधक को चाहिये कि वह पहले कार्य से संबंधित सभी सूचनायें प्राप्त कर ज्ञान अर्जित कर ले। इसके बाद भली प्रकार से चिंतन करे तब कार्य में प्रवर्तित हो तथा अपने कर्मचारियों को कार्य में लगावे। ज्ञान के प्रभाव से कार्यों की पूर्णता सुकर होती है, अन्यथा अनेक बाधाएँ आती हैं। किसी भी कर्म में उससे सम्बद्ध ज्ञान अर्जित करना सफलता की कुंजी है इसलिये गीता ज्ञान की प्रशंसा स्थान-स्थान पर करती है -

**ज्ञानाग्नि सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते।<sup>१२</sup>**

(ज्ञान रूप अग्नि संपूर्ण कर्मों को भस्म कर देती है)

---

११. गीता रहस्य, भाग-१, पृष्ठ-३४६

१२. गीता ४/३७

---

**नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।<sup>१३</sup>**

(इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं)

इसलिये गीता कहती है कि ज्ञान को कर्म का आधार बनाना चाहिये-

**दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय।**

**बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः॥<sup>१४</sup>**

(बुद्धि योग की अपेक्षा सकाम कर्म दूर से ही निकृष्ट है अतः हे धनंजय! तू बुद्धि का आश्रय ले, क्योंकि फल के हेतु बनने वाले अत्यन्त दीन हैं।)

इस प्रकार कार्य से संबंधित संपूर्ण जानकारी को एकत्र कर ज्ञान से कार्य में लगने से प्रबंधन कार्य में बाधाएँ बहुत कम आती हैं तथा गुणात्मकता संभव होती है। गीता दृष्टि ज्ञान से कार्य का संदेश देती है जिससे कर्म उत्तम होते हैं तथा उनमें आनन्द होता है, केवल सूचनात्मक जानकारियों पर आधारित प्रबन्धन अधूरा रहता है।

#### **(५) योग से कार्य कुशलता -**

प्रबंधन में किसी भी कार्य को करने के लिए आवश्यक संसाधनों को पांच भागों में विभाजित किया गया है। इन्हें प्रबंधन में ५ एम (M) के नाम से जाना जाता है। इन पांच एम्स (M) में मानव (Man), सामग्री (Material), यंत्र (Machine), धन (Money) और प्रणाली (Method) को शामिल किया जाता है। इन पाँचों संसाधनों के समुचित सामंजस्य से ही किसी कार्य का सफलतम निष्पादन संभव होता है।<sup>१५</sup> इनमें से किसी भी संसाधन का अभाव बाकी सभी संसाधनों की कुशलता को भी कम कर सकता है।

---

१३. गीता ४/३८

१४. गीता २/४६

१५. पीटर ड्रकर, 'दी प्रेक्टिस ऑफ मैनेजमेंट', पृष्ठ ७८, ७९, ८३

---

भगवान श्रीकृष्ण ने भी कार्य की सफलता के लिये गीता में पांच अंगों की ओर संकेत किया है जिसका क्रियान्वयन प्रबंधन में आवश्यक है -

**अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।**

**विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्।<sup>१६</sup>**

अर्थात् कार्य का उद्देश्य, कार्य को हाथ में लेकर साधनों का उपयोग करने वाला तथा कार्य को परिणाम तक ले जाने वाला कर्ता, विभिन्न प्रकार के साधन, विभिन्न प्रकार के प्रयास तथा अन्ततः पांचवां दैव अनुग्रह, ये कार्यसिद्धि के पांच अंग हैं। आज का प्रबंधन जहाँ ५ च की बात करता है वे गीता प्रबंधन के ४ अंगों में समाहित हो जाते हैं पर गीता उसमें आगे जाकर दैव अनुग्रह का भी प्रतिपादन करती है।

### **दैव अनुग्रह (Grace)**

अपने कर्मों को उत्तम रीति से करते हुये भी बहुत से संयोग मनुष्य के हाथ में नहीं होते, जो कि अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार के हो सकते हैं। तदनुसार प्रबंधन में लक्ष्यों की प्राप्ति प्रभावित होती है। लक्ष्यों की प्राप्ति श्रेष्ठ भी हो सकती है तथा उनकी प्राप्ति में न्यूनता भी आ सकती है, इसे ही गीता में दैव कहा गया है। इसके अनुकूल होने पर वह दैव अनुग्रह माना जाता है।

अतः उत्तम प्रबंधक को प्रबंधन में समग्र दृष्टिकोण (Holistic Approach) लेकर चलना चाहिये, उसे संयोग जनित आशंकाओं का पूर्वानुमान और उनके सुधारात्मक उपायों का भी ज्ञान होना चाहिये, इससे वह प्रतिकूल संयोग के दैविक दुष्प्रभावों को कम कर सकता है।

आज अप्रत्याशित घटनाओं के प्रभाव को विधिक क्षेत्र में तो स्वीकृत कर लिया गया है पर प्रबंधन में अब भी इन पर विचार नहीं किया जा रहा है, किन्तु गीता हमें सभी प्रयत्न कर्म उत्तम रीति से करते रहने पर भी दैव अनुग्रह की बात कहकर हमारा मार्गदर्शन करती है।

कर्मचारियों को कार्य को शीघ्रतापूर्वक व गुणवत्तापूर्ण सम्पन्न करने के लिये उत्तम साधन प्रदान करने चाहिये। ऐसी स्थिति में विभिन्न परिस्थितियां प्राप्त होने पर तदनुकूल प्रयास करते रहना आवश्यक है। इतना सब कर लेने के पश्चात् दैव का (भाग्य, भगवान्) अवश्य ही अनुग्रह प्राप्त होता है, ऐसा समझकर प्रबंधक को आशावादी भी बने रहना चाहिये।



---

अतः भगवान् श्रीकृष्ण ने इन कार्य सिद्धि के पांचों अंगों, उद्देश्य, कर्ता, साधन, विभिन्न प्रयास और अन्ततः दैव अनुग्रह का उपदेश देते हुये सफल प्रबंधन व आशावादी दृष्टिकोण की कुञ्जी भी प्रदान की है। ये सभी उत्कृष्ट प्रबंधन के प्रमुख सूत्र हैं।

योग अर्थात् जुड़ाव, जब प्रबंधक समस्त कार्य प्रक्रिया, उसके साधन एवं कर्मचारियों से उद्देश्य प्राप्ति के लिए सबके कल्याण की भावना से सत्यनिष्ठ होकर जुड़ता है तो न केवल प्रबंधक के कार्यों में कुशलता आती है अपितु सभी कर्मचारियों के कार्यों में भी कुशलता उत्पन्न हो जाती है। गीता हमें योग से कार्य करने का उपदेश देती है -

**बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।**

**तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्॥<sup>१७</sup>**

(अर्थात् समबुद्धियुक्त व्यक्ति अपने को अच्छे और बुरे दोनों ही कर्मों से मुक्त कर लेता है, अतः योग के लिये प्रयत्न करो क्योंकि योग ही कार्यों में कुशलता लाता है।)

“इसलिये यह बात स्पष्ट रीति से प्रकट कर देने के लिये योग शब्द से किसी विशेष प्रकार की कुशलता, साधन, युक्ति अथवा उपाय को गीता में विवक्षित समझना चाहिये। उस ग्रंथ में योग शब्द की व्याख्या की गयी है ‘योगः कर्मसु कौशलम्’ (गीता-२/५०) अर्थात् कर्म करने की किसी विशेष प्रकार की कुशलता, युक्ति, चतुराई अथवा शैली को योग कहते ही सामान्यतः देखा जाये तो एक ही कर्म को करने के लिये अनेक योग या उपाय होते हैं परन्तु उनमें से जो उपाय या साधन उत्तम हों उसी को योग कहते हैं।”<sup>१८</sup>

कार्य में श्रेष्ठता तभी आती है जब कार्य से संबंधित तकनीकी का ज्ञान हो, साथ ही उत्कृष्ट एवं परिश्रम पूर्वक कर्म का आचरण हो तथा समर्पण और निष्ठा हो, इस प्रकार गीता हमें ज्ञान, कर्म और भक्ति योग द्वारा प्रबंधन में उत्तम मार्गदर्शन करती है।

---

१७. गीता २/५०

१८. गीता रहस्य, भाग-१, पृष्ठ-८१

---

वस्तुतः योग के आचरण से अपने कार्यों में कौशल उत्पन्न कर प्रबंधक उत्तम कर्मयोगी बन सकता है। गीता के प्रसिद्ध श्लोक में इस बात का उत्तम प्रकार से उल्लेख किया गया है -

**कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।**

**मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥**<sup>१९</sup>

“हे अर्जुन! तेरा कर्म करने पर ही अधिकार है फल पर तेरा अधिकार नहीं है इसलिये फलों में आसक्ति मत रख, इस प्रकार कर्म न करने में भी तेरी आसक्ति न हो।” इसमें केवल फल पर ध्यान दिये बिना एकाग्रचित्त से कर्म करने की ही बात कही है जो कि उत्तम प्रबंधन के लिए आवश्यक है। कर्म करते समय व्यक्ति के मन में फल के लिए आसक्ति नहीं होनी चाहिये क्योंकि इससे उत्तम परिणाम भी प्राप्त नहीं होते। इसलिए कर्मयोग के आचरण से अपने कर्मों में कुशलता लाकर उत्तम प्रबंधन किया जा सकता है।

#### (६) प्रबंधन द्वारा सबके कल्याण की भावना -

कॉर्पोरेट गवर्नेंस के तहत प्रबंधन में संस्था के उद्देश्यों को तीन स्तरों में बांटा जाता है। किसी से भी प्रबंधक को व्यक्तिगत, संस्थागत और सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रख कर निर्णय करने होते हैं। कोई भी संस्था या जटिल तंत्र होता है जिसमें बहुत सारे हित धारक होते हैं। संस्था के मालिक, निवेशक, देनदार, कर्मचारी, उपभोक्ता, विक्रेता, सरकार, समाज सबसे महत्वपूर्ण हितधारक होते हैं। प्रबंधन द्वारा सभी के हितों के लिए कार्य किया जाना चाहिए। दीर्घ काल में किसी भी संस्था के कार्यरत रहने के लिए यहाँ आवश्यक है कि तीनों स्तरों के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयास किये जायें।

उत्तम प्रबंधक को अपने प्रबंधन एवं प्रशासन में उद्देश्य और कार्यों का निर्धारण इस प्रकार करना चाहिए कि प्रबंधन की प्रक्रिया एवं परिणाम में सबका कल्याण हो। अभावग्रस्त को ऊपर उठाने में मदद मिले। उत्तम प्रबंधन का फल सबको मिलना चाहिये, उसमें स्वार्थ न होकर परार्थ का पालन किया जाना आवश्यक है। यह तब होता है जब प्रबंधक की दृष्टि में समता होती है, वह सबको समान समझता है, उसके लिए कोई पराया और कोई अपना नहीं होता। इस प्रकार सभी को अपनी योग्यता के अनुसार फल मिलता है। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने प्राणी मात्र को स्वयं का अंश माना है -

**“ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः”**<sup>२०</sup>

---

१९. गीता २/४७

२०. गीता १५/७

---

अतः प्रबंधक को सभी में परमात्मा का अंश मानते हुये समत्व का व्यवहार करना चाहिये। भगवान् ने गीता में पुनः कहा है -

“इसलिये गीता में कहा है कि शुद्ध या सात्त्विक बुद्धि वह है कि जो बुद्धि से भी परे रहने वाले नित्य आत्मा के स्वरूप को पहचाने और यह पहचान कर कि सब प्राणियों में एक ही आत्मा है, उसी के अनुसार कार्य-अकार्य का निर्णय करे, इस सात्त्विक बुद्धि का ही दूसरा नाम साम्य बुद्धि है। और इसमें साम्य शब्द का अर्थ ‘सर्वभूतान्तर्गत’ आत्मा की एकता या समानता को पहचानने वाली है जो बुद्धि इस समानता को नहीं जानती वह न तो शुद्ध है और न सात्त्विक भी। इस प्रकार जब यह मान लिया गया कि नीति का निर्णय करने में साम्य बुद्धि ही श्रेष्ठ है।”<sup>२१</sup>

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥<sup>२२</sup>

अर्थात् - साधु पुरुष अपने उत्तम ज्ञान के कारण एक विद्वान् तथा विनीत ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता तथा चाण्डाल सबको समान दृष्टि से देखते हैं। इससे गीता की ये भावना हमारे समक्ष आती है कि जो अभावग्रस्त है उसका पूर्ण समत्व दृष्टि से कल्याण अपेक्षित है। इस प्रकार उत्तम प्रबंधन एवं प्रशासन में समता की भावना रखते हुए अभावग्रस्त के उन्नयन एवं सभी के कल्याण की भावना का दर्शन गीता द्वारा होता है। इस समता द्वारा सबके कल्याण की भावना से किये गये प्रबंधन से समाज एवं राष्ट्र को परम समृद्धि प्राप्त होती है। यही उत्तम प्रबंधन का उत्तम उद्देश्य भी है। आज के प्रबंधन में (CSR) निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व के तहत प्रबंधन सामाजिक उत्तरदायित्व के कार्य करता है पर गीता दृष्टि से किये प्रबंधन में पूर्व में ही श्रेष्ठता एवं चिरस्थायी परिणाम व सर्वत्र प्रशंसा का भाव रहता है।

### (७) समत्व भाव -

प्रबंधक को एक समान भाव के साथ योजना बनानी चाहिए। उद्देश्य यदि बहुत अधिक ऊँचे स्थापित कर दिए जायेंगे तो उन्हें हासिल करना संभव नहीं होगा और यदि उद्देश्यों को बहुत छोटा कर दिया जायेगा तो भी वो सही मायने में उद्देश्य नहीं होंगे। अतः प्रबंधन और नेतृत्व को सदैव समान भाव के साथ कार्य करना चाहिए। प्रबंधन में अनेक बार बहुत सारी समस्याएं भी समक्ष आती हैं। ऐसी परिस्थिति में भी आवश्यक है कि समत्व भाव बनाये रखा जा सके तभी बेहतर और संतुलित निर्णय लिए जा सकते हैं।

---

२१. गीता रहस्य, भाग-२, पृष्ठ-४८३

२२. गीता ५/१८

---

उत्तम प्रबंधन में प्रबंधक एवं प्रशासक को चाहिये कि वह समस्त कार्य प्रक्रिया में समत्व भाव एवं सकारात्मक दृष्टिकोण को धारण करे अर्थात् सफलता व असफलता में समान रहते हुए आशावादी दृष्टिकोण रखे। गीता इस समत्व भाव के लिए प्रबंधन में हमारा मार्गदर्शन करती है।

**योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।**

**सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।<sup>२३</sup>**

अर्थात् हे अर्जुन! जय और पराजय की समस्त आसक्ति त्यागकर समभाव से अपना कर्म करो, ऐसी समता समत्व योग कहलाती है।

“कर्म करते समय बुद्धि को स्थिर, पवित्र, सम और शुद्ध रखना ही युक्ति कौशल है और इसी समत्व को योग कहते हैं।”<sup>२४</sup>

वस्तुतः सम्पूर्ण उत्तम कार्य प्रक्रिया का संचालन करते हुए प्रबंधन में समत्व योग का आचरण महत्त्वपूर्ण है। प्रबंधक व प्रशासक में कार्य करते समय सफलता के लिए आसक्ति एवं असफलता का डर नहीं होना चाहिये साथ ही परिणाम प्राप्त होने पर सफलता एवं असफलता में उसे समान भाव धारण करना चाहिये क्योंकि प्रबंधन में कार्य पूर्ण होने पर भी पुनः दूसरे उद्देश्यों पर आधारित दूसरे कार्य प्रबंधक को करने होते हैं जो कि एक अनवरत प्रक्रिया है। यदि प्रबंधक कार्य के सफल होने पर निष्क्रिय हो जाता है तथा कार्य के असफल होने पर उदास होता हुआ अवसाद में चला जाता है तो दोनों ही स्थितियां ठीक नहीं हैं।

अतः उत्तम प्रबंधक को सफलता एवं असफलता में समान भाव रखते हुए अग्रिम कार्यों में जुट जाना चाहिये। समान भाव के कारण प्रबंधक में उत्तम विवेक बना रहता है जो अग्रिम सफलताओं का प्रबल हेतु होता है।

प्रबंधक ऐसी परिस्थिति या गंभीर कष्ट आने पर मित्रवत् स्वयं को संभाल कर उस परिस्थिति से अपने को उभारे, कभी भी अवसाद को प्राप्त न करे क्योंकि व्यक्ति स्वयं ही अपना मित्र है तथा स्वयं ही शत्रु है। गीता अवसाद की स्थिति से उभरने के लिये हमारा मार्गदर्शन करती है।

**उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।**

**आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।<sup>२५</sup>**

---

२३. गीता २/४८

२४. गीता रहस्य, भाग-२, पृष्ठ-५६

२५. गीता ६/५

---

अर्थात् मनुष्य को चाहिये कि वह अपने मन की सहायता से स्वयं का उद्धार करे और अपने को नीचे गिरने न दे, क्योंकि मनुष्य स्वयं का मित्र भी है और शत्रु भी।

इस प्रकार उत्तम प्रबंधन में प्रबंधक व प्रशासक अपने साथ सम्पूर्ण कर्मचारियों को सफलता एवं असफलता में समान रहकर कार्य करने तथा प्रत्येक परिस्थिति एवं कष्ट से स्वयं को मित्रवत् अपने आपको संभालकर ऊपर उठाने को प्रेरित करे। प्रबंधन में यह गुण निरन्तर क्रियाशीलता के लिये आवश्यक है जिससे निर्धारित उद्देश्यों की पूर्णतः प्राप्ति होती है। अतः प्रबंधन में हमें गीता में उपदिष्ट समत्वयोग का अनुसरण करना चाहिये। आज के प्रबंधन में समत्वभाव के बिन्दु पर कोई विचार नहीं किया जाता।

वस्तुतः गीता सम्पूर्ण जीवन का प्रबंधन शास्त्र है। यह इतिहास ग्रन्थ महाभारत का अंश होकर केवल ऐतिहासिक ग्रन्थ ही नहीं अपितु सम्पूर्ण रूप से वैज्ञानिक शास्त्र है। उपर्युक्त सात प्रमुख बिन्दु प्रबंधन की दृष्टि से बताये गये हैं किन्तु गीता के अनुशीलन और अभ्यास से प्रबंधक एवं प्रशासक के व्यक्तित्व में ऐसी बहुत सी विशेषतायें आ सकती हैं जो उसे प्रत्येक क्षण सही दिशा में प्रेरित करती हैं यथा सदैव प्रसन्न रहना, आदर्श उपस्थित करना, अच्छे लोगों को प्रेरित करना, खराब को सुधारना, मृदुव्यवहार, प्रबंधन द्वारा पर्यावरण संरक्षण का ध्यान, अपने प्रबंधन में त्याग के साथ सब में बांटकर भोग की भावना का विकास, प्रबंधन में काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुर्गुणों से सबको दूर रखना, सात्विक आहार, विहार व व्यवहार द्वारा प्रबंधन विकास ऐसी बहुत सी अनेक ऐसी बातें हैं जो गीता के अनुशीलन और अभ्यास से व्यक्तित्व में आती हैं जिससे प्रबंधक व प्रशासक अपने प्रबंधकीय कार्यक्षेत्र में उच्चतम गुणवत्ता स्थापित करने में सक्षम होता है।

### उपसंहार

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रबंधन के कार्य में लगे प्रबंधक एवं कर्मचारियों में गीता के अनुशीलन एवं अभ्यास से एक आध्यात्मिक दृष्टि आ जाती है। इस दृष्टि से किया गया प्रबंधन उसकी गुणवत्ता को बढ़ाता है। उस दृष्टि से प्रबंधन में लक्ष्य निर्धारण, परियोजना निर्माण में श्रेष्ठता तो आ ही जाती है, साथ ही उसमें चिरस्थायी परिणाम प्राप्त होते हैं तथा उनकी सर्वत्र प्रशंसा होती है। आज का प्रबंधन जहाँ अपने कार्यों के सामाजिक दुष्प्रभावों को दूर करने हेतु सामाजिक उत्तरदायित्व के कार्य कर उस कमी की पूर्ति करने का प्रयत्न करता है। किन्तु गीता पहले से ही श्रेष्ठता से ऐसे कार्य करने की प्रेरणा देती है जिसकी सर्वत्र प्रशंसा हो।

संगठन में लक्ष्यों की पूर्ति ही प्रमुख होती है उसके पीछे व्यक्तिगत लोभ-लालच और स्वार्थ का अभाव होना चाहिये, इससे लक्ष्यों की पूर्ण एवं गुणात्मक प्राप्ति संभव है। गीता से उत्पन्न

---

आध्यात्मिक दृष्टि से प्रबंधक एवं कर्मचारियों में किसी प्रकार का व्यक्तिगत लोभ-लालच, स्वार्थ नहीं होता। आज के प्रबंधन में इसका कोई उपाय नहीं है कि प्रबंधन के लक्ष्यों की पूर्ति के पीछे लोगों का व्यक्तिगत लोभ-लालच, स्वार्थ न हो। संगठन में अनुशासन भी महत्वपूर्ण है किन्तु वह इस प्रकार हो जिससे व्यक्तिगत सर्जनात्मकता का हास न होकर उसमें वृद्धि हो। गीता की आध्यात्मिक दृष्टि से इन दोनों के बीच बेहतर संतुलन होता है जिससे उत्तम सृजनात्मक स्वतंत्रता से प्रबंधन में नवाचार तो बढ़ते ही हैं साथ ही गुणात्मकता में वृद्धि होती है।

आज के प्रबंधन में रुचि एवं क्षमताओं के अनुसार श्रम विभाजन की बात की जाती है पर गीता व्यक्ति के सत्त्व, रज एवं तमोगुण के अनुसार स्वभाव का वर्गीकरण कर उनकी निपुणता से बौद्धिक, शारीरिक तथा अन्य कार्यों का निर्धारण करती है जिससे व्यक्ति के मूल गुण व उसके स्वभाव से कार्य करने से उसकी निपुणता बढ़ती है साथ ही निपुणता द्वारा कार्य करने से प्रबंधन के उत्तम लक्ष्य सिद्ध होते हैं।

गीता एक दृष्टि देती है जिससे व्यक्ति कार्य से संबंधित संपूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पूर्णविवेक से कार्य में लगता है, जिससे न केवल श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त होते हैं अपितु कार्य करने में आनन्द भी रहता है वर्तमान प्रबंधन में सूचनायें प्राप्त कर कार्य में लगने की बात तो कही जाती है पर वे कार्य प्रक्रिया से संबंधित होती है किन्तु गीता की दृष्टि ज्ञान एवं आनन्द पर आधारित है।

आज के प्रबंधन में मानव, सामग्री, यंत्र, धन और प्रणाली किसी कार्य की सिद्धि के लिये पाँच संसाधन माने जाते हैं। वहाँ गीता द्वारा लक्ष्य, साधन, कर्ता, प्रयास तो कार्य सिद्धि के अंग माने ही हैं, साथ में दैव अनुग्रह भी माना है जो कि अप्रत्याशित घटनाओं, कार्यों के प्रति समग्र दृष्टिकोण रख उनमें सुधारात्मक उपाय व सकारात्मक दृष्टिकोण के लिये आवश्यक है। साथ ही योग से उत्पन्न दृष्टि से प्रबंधक सभी संसाधनों का उत्तम समन्वय करने में सक्षम होता है जिससे कार्यकुशलता उत्तम हो जाती है। फलतः प्रबंधन के उत्तम लक्ष्य प्राप्त होते हैं।

समष्टि से व्यष्टि कल्याण स्वतः ही होता है। गीता की आध्यात्मिक दृष्टि सबमें परमात्मा का अंश मानती हुई सबके कल्याण के लिये प्रेरित करती है। आज के प्रबंधन में जहाँ (CSR) निगमित सामाजिक दायित्व की बात कर प्रबंधन के दुष्प्रभावों को दूर करने के लिये कुछ सामाजिक उत्तरदायित्व के कार्य भी प्रबंधन करने लगा है पर गीता हमें इस प्रकार के प्रबंधन के लिये प्रेरित करती है जिसके चिरस्थायी परिणाम हों, संपूर्ण कार्यकलाप श्रेष्ठता आधारित हो तथा उसकी सर्वत्र प्रशंसा हो। अतः गीता दृष्टि से किया गया प्रबंधन सबके कल्याण, श्रेष्ठता एवं टिकाउपन परिणामों के उदात्त लक्ष्यों को हमारे सामने रखता है।

---

अन्ततः गीता के आध्यात्मिक भाव के कारण प्रबंधक एवं प्रक्रिया में लगे कर्मचारियों में समत्व भाव उत्पन्न हो जाता है जिससे वे किसी भी परिस्थिति में सम व्यवहार रखते हुये उत्कृष्ट कार्य करते हैं। आज के प्रबंधन में इस प्रकार की विशेषता उत्पन्न करने का कोई उल्लेख नहीं है।

### निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि प्रबंधन प्रक्रिया में आधुनिक दृष्टि से जिन बातों पर ध्यान दिया जाता है चाहे वो उद्देश्य निर्धारण से संबंधित हों या संगठन में श्रम विभाजन, अभिप्रेरण निर्देशन एवं नियंत्रण के कार्यों से संबंधित हो, सभी में प्रमुख रूप से भौतिक लक्ष्यों की ओर ध्यान दिया जाता है। अतः प्रक्रिया काल अथवा परिणाम प्राप्ति पर उनमें भौतिक दृष्टि के कारण स्वाभाविक असंतोष, तृष्णा, राग, द्वेष आदि दोषों की स्थिति बनी रहती है।

१. प्रबंधक एवं प्रबंधन प्रक्रिया में लगे कर्मचारियों में गीता के अनुशीलन और अभ्यास से आध्यात्मिक दृष्टि उत्पन्न हो जाती है अतः तदनुरूप ही उद्देश्यों का निर्धारण स्वभावानुकूल श्रम विभाजन, ज्ञान से युक्त कर्म, योग से कार्य कुशलता, प्रबंधन से सबके कल्याण की भावना, समत्व भाव आदि सूत्रों से प्रबंधन प्रक्रिया संचालित होती है।
२. आध्यात्मिक दृष्टि के कारण कर्म पर ही संपूर्ण ध्यान होता है। फल की आकांक्षा व स्वार्थ का नितान्त अभाव होता है, सभी में समत्व बुद्धि होने से सब को परमात्मा का अंश समझकर सबके कल्याण की भावना होती है। इस उच्च कोटि की आध्यात्मिकता के कारण प्रबंधक अपने कर्म से ही भगवान की अर्चना करता है, उसका परिणाम प्राप्ति का कोई लक्ष्य नहीं होता। इस कर्मयोग के कारण उनके द्वारा किये गये कर्म अपने आप उत्कृष्ट भौतिक परिणाम तो स्वतः ही उत्पन्न करते ही हैं, साथ ही परिणामों में समभाव की आध्यात्मिक दृष्टि के कारण हर्ष एवं असंतोष से रहित होकर प्रबंधक कर्मों का अनवरत आचरण करता रहता है उसमें राग-द्वेष, असन्तोष आदि दुर्गुण भी उत्पन्न नहीं होते जो कि भौतिक परिणामों में आसक्ति से आते हैं।

स्पष्ट है कि वर्तमान आधुनिक प्रबंधन भौतिक परिणामों को प्राप्त करने के लिये कार्य करता है। इस भौतिक दृष्टि के कारण उसमें निहित दुर्गुण, असन्तोष, राग, द्वेष आदि उत्पन्न हो जाते हैं, वे प्रबंधन प्रक्रिया में न्यूनता उत्पन्न कर देते हैं जिससे भौतिक परिणामों में भी कमी आ जाती है। आत्मिक आनन्द व सामाजिक कल्याण में तो कमी आती ही है।

गीता हमें आध्यात्मिक दृष्टि देती है। आध्यात्मिकता के कारण प्रबंधक परिणामों एवं उद्देश्यों से ऊपर उठकर अपने कर्म को उत्तम रीति से सम्पन्न करता है जिससे स्वाभाविक आत्मिक आनन्द बना

---

रहता है तथा कर्म के उत्तम ढंग से सम्पन्न होने एवं समभाव के कारण उत्तम व्यक्तिगत एवं सामाजिक उन्नति एवं समृद्धि के साथ आत्मिक संतोष का भाव रहता है।

निष्कर्ष यह है कि प्रबंधन की चर्चा करते समय यदि गीता में प्रतिपादित सिद्धान्तों का भी समावेश करा जाये तो प्रबंधन की गुणवत्ता बढ़ जायेगी। इसका मुख्य कारण यह है कि गीता प्रबंधन के भौतिक आधार के साथ आध्यात्मिक आधार भी देती है। केवल भौतिकता संघर्ष को जन्म देती है जिसका निवारण आध्यात्मिकता द्वारा ही हो सकता है। भौतिक दृष्टि कर्म के भौतिक परिणाम पर दृष्टि रखती है जिसके कारण कर्म एक सदा कर्तव्य-मात्र बन कर रह जाता है जबकि आध्यात्मिक दृष्टि (Spirituality) कर्म में मिलने वाले आनन्द पर केन्द्रित रहती है जिसके फल स्वरूप प्रबंधन भार-स्वरूप न होकर सहज आत्मीयता की अभिव्यक्ति बन जाता है।